International Journal of Sanskrit Research
अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(2): 211-213
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 25-10-2021
Accepted: 31-12-2021

Sakib Ali
Research Scholar, School of Sanskrit and Indic Studies (SSIS) Jawahar Lal Nehru University, New Delhi, India

Kajal Agrawal
Research Scholar, Department of Sanskrit, Aligarh Muslim University Aligarh, Uttar Pradesh, India

Corresponding Author:
Sakib Ali
Research Scholar, School of Sanskrit and Indic Studies (SSIS) Jawahar Lal Nehru University, New Delhi, India

''भारतीय दर्शन में षड् दर्शन की अवधारणा एवं विकास क्रम''

Sakib Ali and Kajal Agrawal

प्रस्तावना
सभ्यता के प्रथम उदय से मनुष्य में चेतना की जागृति हुयी है तब से मनुष्य निरन्तर चिन्तन करते हुए आ रहा है। बुद्धि में परिपक्वता आने पर सोचता है कि वह कौन है? कहाँ से आया है? कहाँ जायेगा? यह जीवन क्यों प्राप्त हुआ? इस जीवन का क्या उद्देश्य है? इस प्रकार अनेक प्रश्न उत्पन्न होते हैं? वह संसार में वस्तुओं को नये–नये दृष्टि कोण से देखता है जो पहले उसने कभी नहीं देखा था इस प्रकार वह अनेक प्रश्नों से विचलित होकर तथ्य परक एवं सत्य की खोज में निकलता है इस तथ्यपरक एवं सत्य की खोज को ही ''दर्शन'' नाम से पुकारते है वर्तमान काल में 'दर्शन' अलग–अलग क्षेत्रों में अनेक प्रकार से उन्नति एवं प्रगति का मार्ग बनाये हुए है।

मुख्य शब्द– सभ्यता, भारतीय दर्शन, उन्नति एवं प्रगति, संसार, सत्य, जीवन।

भारतीय दर्शन –
दर्शन के उदय के विषय में प्रमाणित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है कि कब आरम्भ हुआ? वर्तमान समय में विकसित विज्ञान एवं विद्वान दोनों ही इस प्रश्न के सामने स्वयं को जैसा कि तैसा पाते है यदि दर्शन आरम्भ के विषय पर चर्चा करते है तो एक प्रश्न और सामने आ खड़ा होता है कि सृष्टि की उत्पत्ति कब हुयी? क्योंकि यह दोनों प्रश्न आपस में सम्बन्ध रखते हैं फिर भी दर्शन ने अपने अथक प्रयासों एवं गहन चिन्तन से अनेक मत प्रस्तुत किये है। भारतीय परम्परा के अनुसार ''शब्द में धातु के आधार पर उस शब्द की व्याख्या की जाती है यह क्रिया निर्वचन[1] (Ctimological) कहलाती है। इस प्रकार 'दर्शन' शब्द 'दृश' धातु से बना है जिसका अर्थ है देखना अर्थात 'अवलोकन, अतः दर्शन की परिभाषा का व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ किया जाता है।

''दृश्यते अनेन इति दर्शनम''[2]

(जिसके द्वारा देखा जाए)।
अब यह प्रश्न आता है क्या देखा जाए? सामान्य रूप से न देखकर तात्विक दृष्टि से सत्य की खोज ही दर्शन है। 'सत्य' शब्द दर्शन के लिए प्रेरणा देता है यदि सत्य की प्रधानता के स्वरूप के विषय में देखें तो पता चलता है कि सत्य प्रत्येक धर्म में अपना प्रमुख स्थान रखता है। यदि कोई भी धर्म संसारिक दृष्टि से छोटा बढ़ा क्यों न हो परन्तु सत्य की महत्ता प्रधान होती है। इसी आधार पर कहाँ जा सकता है कि सत्य ही सार्वभौमिक धर्म है। वैदिक धर्म ब्रह्म के सत्य स्वरूप को मानता है।

''सत्यं ज्ञानंमनन्त ब्रह्म''[3]

सम्पूर्ण विश्व एवं प्राचीन सभ्यता का लिखित रुप में प्रमाणित ग्रन्थ ऋग्वेद है। जिसमें मनुष्य का चिन्तन तथा स्वयं के प्रति विचार एवं ईश्वर आत्मा तत्व के विषय में जिज्ञासा की गयी है। यदि यह कहा जाए कि मनुष्य ने अपनी ''आत्मा तथा परमात्मा से सम्बन्ध'' के विषय में चिन्तन के बीज ऋग्वेद में निहित है। अतः प्रमाणिकता के आधार पर कहा जा सकता कि भारतीय दर्शन का आरम्भ ऋग्वेद के समय से हुआ है। यह कहना उचित होगा कि ऋग्वेद ने भारतीय दर्शन को मति प्रदान की तथा ऋग्वेद को समझने के लिए उपनिषदों की रचना हुयी। उपनिषदों ने दर्शन को 'गति' प्रदान की और इस दार्शनिक परम्परा को आगे बढ़ाने का कार्य किया। समग्र एवं सम्पूर्ण रूप से दार्शनिक दृष्टि का चिन्तन उपनिषदों में प्राप्त होता है। उपनिषदों को रहस्य विद्या भी कहते है। वर्तमान में वेदान्त के नाम

से भी जाना जाता है। आत्मा तथा परमात्मा का विवेचन जिस प्रकार उपनिषदों में प्राप्त होता है वह अन्य कहीं नहीं दिखाई देता है। उपनिषदों के समय से ही 'आत्मा' दर्शन का विषय रही है। भारतीय दर्शन का मूल ''विशुद्धि'' से दूर परम सत्य का प्रकाश है' प्राचीन काल से ही उपनिषदों में यह सिद्धान्त सर्वमान्य माना गया है।

''आत्मा वा अरे दृष्टव्यः''[4]

(आत्मा दर्शन एवं साक्षात्कार का विषय है)

षड् दर्शन की अवधारणा

भारतीय दर्शन वैदिक काल से लेकर उपनिषदों की रचना काल तक पूर्ण रूप विस्तार एवं प्रसारित हुआ। इस समय तक कोई भी विचार विरोध में नहीं था। समय उपरान्त वेदों को समाज के बीच अलग तरीके से प्रस्तुत किया जाने लगा सम्पूर्ण जन मानस में यह धारणा प्रमुख कर दी गयी कि वेद एक वर्ण को ही वरीयता देता है बाकी अन्यत्र कोई नही। साथ ही यह भी कहाँ जाने लगा कि आत्मा, परमात्मा नाम की कोई चीज़ नहीं होती है अर्थात वेद ईश्वरीय ग्रन्थ नहीं है। उसी समय से दर्शन दो विचार धाराओं में विभक्त होता हुआ नजर आने लगा। इस विभाजन को प्रमाणित करते हुए 'मनु' ने लगभग 220 से 206 ईसा पूर्व मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय में वेदों को नाकरात्मक रूप में स्वीकार करने वाले विचार को नास्तिक की संज्ञा प्रदान की है। यह समय आज से 12234 वर्ष पूर्व रहा होगा।

योदवमन्येत ते मूले हेतशास्त्रनयाद् द्विजः।
स साधुभिर्बहिः कार्यो नास्तिको वेद निन्दकः।।''[5]
(मनुस्मृति)

इस बात में अब कोई संदेह नहीं रहा कि वेदों की निन्दा करने वाले विचार को नास्तिक कहते हैं। उस समय चारों ओर जन मानस में नास्तिक विचार अपने पैर पसार चुका था। इस विचार को 'चार्वाक' की संज्ञा दी जाने लगी और यही नास्तिक विचार धारा का आरम्भकर्ता भी माना जाने लगा।
सर्वदर्शन के अनुसार–'पद्मपुराण में चार्वाक का मत है कि असुरो को बहकाने के लिए के लिए बृहस्पति ने वेद बिरूद्ध मत प्रकट किया था'' अर्थात अनेक तथ्यों से यह सिद्ध होता है कि चार्वाक निरीश्वर वादी मत बहुत प्राचीन है। इसका कार्य सदैव वेदों के विरुद्ध रहा है। परलोक में विश्वास न रखने के कारण यह 'लोकायत' भी कहलाता है। चार्वाक सुख को ही जीवन का लक्ष्य मानता है तथा सुखवाद का पूर्ण समर्थन करता है। दुःख के कारण जो सुख को नहीं भोगना चाहते वह मूर्ख है साथ ही तर्क भी देता है। यदि मछली में काँटे है तो क्या उसको दूसरी मछली न खाएँ अर्थात मछली को खाँ कर सुख भोग करना ही चार्वाक का लक्ष्य है।

यावज्जीवेत सुखं जीवेत ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत।[6]
भस्मीभूस्त देहस्य पुनरागमनं कुतः !!
(चार्वाकदर्शन)

अर्थात जब तक जियो मौज (सुख) से जियो अगर पैसा नहीं तो उधार लेकर मौज करो शमशान में जलने के बाद शरीर को वापस आते हुए किसी ने देखा है?
नास्तिक विचार धारा का बोल वाला खत्म करने के लिए तथा वेदों के अनुसार जीवन यापन करने के लिए विद्वानों ने सूत्र ग्रन्थों की रचना करना आरम्भ कर दिया था। सूत्रों की रचना का कारण मुख्य रूप से आस्तिक मत रहा है। सूत्र काल से ही भारतीय षड् दर्शन की अवधारणा उत्पन्न होने लगी। प्रमाणित रुप से यह कहना कठिन है कि यह श्रेणी वद्ध कब से हुए है इस विषय पर विद्वानों के अलग–अलग मत भेद है।

वैदिक दर्शन–वेद, उपनिषद्
महाकाव्य दर्शन– रामायण, महाभारत,
सूत्र काल– षड् दर्शन

निवर्तमान काल– गांधी दर्शन, राजा राम मोहन राय दर्शन आदि। प्राचीन समय से ही भारतीय दर्शन धार्मिक परम्परा के रूप में चला आ रहा है पहले यह एक मात्र दर्शन था लेकिन लोगों ने अब इसे धर्म के रूप में स्वीकार कर। अपने जीवन का हिस्सा मानने लगे।

षद्–दर्शन का विकास क्रम

सामान्य शब्दों में दर्शन की उत्पत्ति ''आध्यात्म'' द्वारा हुयी है। जब व्यक्ति पूर्ण विचलित हो जाता है तब दर्शन अर्थात संतोष की ओर अग्रसर होता है। इस दृष्टि कोण के आधार पर सूत्र ग्रन्थों की रचना हुयी । मैक्समूलर के अनुसार सूत्र काल का समय 600 से 200 ई0पू0 माना जाता है इस समय में सूत्र ग्रन्थों की रचना हुई जो निम्न है।
सांख्यसूत्र –महर्षि गौतम,
योगसूत्र – महर्षि पंतजली
न्यायसूत्र–महर्षि गौतम
वैशेषिक –महर्षि कणाद
पूर्व मीमांसा– महर्षि जैमिनी
उत्तर मीमांसा –महर्षि बादरायण

इन षड् सूत्र ग्रन्थों का उद्देश्य वेदों की सत्ता को पुनः स्थापित करना था जिससे कि सम्पूर्ण जन मानस को दोबारा से वेदों की ओर लाया जा सके।
हरिभद्रसूरि (755–827 विक्र स0) ने अपने ग्रन्थ 'षड् दर्शन समुच्चय' कहां है कि 'ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में न्याय–वैशेषिक, सांख्य–योग, मीमांसा ये दर्शन वेद में आस्था रखने के कारण पृथक पृथक रूप में अपना–अपना सीन बाना चुके थे। इनके विरोध में बौद्ध जैन चार्वाक ये तीनो अवैदिक दर्शन ईसा पूर्व काल से वैदिक दार्शनिकों के लिए समस्या के रूप में बने हुये थे। मीमांसा में कर्म और ज्ञान के आधार पर दो भेद हो गये अतः वैदों में षड् दर्शन की सीापना हो चुकी थी। जिसमें न्याय–वैशेषिक सांख्य–योग और पूर्व एवं उत्तर मीमांसा की प्रधानता थी। सूरि ने अपने षड् दर्शन समुच्चय में बौद्ध, नैयायिक, सांख्य जैन वैशेषिक जैमिनी दर्शनों को षड् श्रेणी में रखा है इन्हे आस्तिक वाद की संज्ञा दी है।

''बौद्धं नैयायिंक साख्य जैनं वैशेषिक तथा।
जैमिनीयं च नामानि दर्शनाम् मून्यहो।।

षड् दर्शन को संख्या के आधार पर अनेक विद्वानों ने अपनी इच्छानुसार दर्शनों को षड् दर्शन के क्रम में रखा हैं परन्तु यह मत अधिक मान्य नहीं हैं माधव सरस्वती 1350ई में ''सर्वदर्शन कौमुदी'' में वैदिक तथा अवैदिक क्रम में रखा है। वैदिक में षड् एवं अवैदिक में तीन दर्शनों का वर्णन किया है।
अतः दार्शनिक विचार धारा किस समय से सूत्राधार को धारण करके षड् दर्शन में श्रेणी बद्ध होने लगी यह कहना कठिन है। अस्तिक दर्शन की संख्याओं में विद्वानो में मतभेद है लेकिन सामान्य रीति से छःप्रकार माने जाते है तथा इन्हें भी तीन श्रेणियों में रखा जाता है न्याय–वैशेषिक सांख्य–योग मींमासा–वेदान्त इन षड् दर्शनों का विकास क्रम प्राय समान रूप रखता है।

निष्कर्ष

भारतीय दर्शन में षड् दर्शन की अवधारणा का तात्पर्य ही वेदों में आस्था रखना है। वेदों के विषय में विद्वानों ने अनेक मत प्रस्तुत किये है परन्तु निष्कर्ष शून्य रहा है। इस विषय में भी ऐसा ही प्रतीत होता हैं। मनुस्मृति एवं सूत्र ग्रन्थों के माध्यम से षड् दर्शन की अवधारणा एवं उसके विकास क्रम को प्रतिपादित करने का प्रयास किया है। षड् दर्शन की अवधारणा एवं उसके विकास क्रम के विषय में सबसे प्राचीन ग्रन्थ जो कि सूत्र ग्रन्थों के रूप में निबद्ध है। यह सूत्र ग्रन्थ भले ही आज इन षड् दर्शनों के जन्मदाता ग्रन्थ माने जाए परन्तु इन ग्रन्थों से दर्शनों का आरम्भ होना शुरू नहीं होता है। इन दर्शनों का आरम्भ इन सूत्र ग्रन्थों से प्राचीनतर है।

द्वितीय स्त्रोत

1. हरिभद्र सूरि, षड् दर्शन समुच्चय, नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1989
2. आचार्य वलदेव उपाध्याय, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, वाराणसी : चौखम्भा ओरियन्टालिया प्रकाशन, 1979
3. Max Muller KM. The six systems of Indian Philosphy, Varansi: Chowkhamba Sanskarit Series, 1919.
4. मध्वाचार्य, सर्वदर्शन संग्रह, बम्बईः खेमराज श्रीकृष्ण दास प्रकाशन, 1847।
5. श्री सतीशचन्द्र चट्टोपाध्याय, भारतीय दर्शन, पटना : प्रस्तक भण्डार प्रकाशन।
6. डा0 कुलदीप चन्द्रपन्त, अनन्ता अन्तराष्ट्रीय संस्कृत जनरल, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय 2020 ISSN: 2394*7519
7. Dr. Pankaj Kumar Mishra Youtube lecture:Delhi:University
8. चार्वाक दर्शन, wikipedia.

संदर्भग्रन्थ

1. निरूक्त, द्वितीया अध्याय निर्वचन सिद्धान्त 35/42
2. वृ0 उपनिषदः दृश्यते अनेन इतिदर्शनं – बृहदारण्यक उपनिषद्
3. सत्यं ज्ञानं ब्रह्म'' : तैत्तिरीय उ0 ब्रह्मानन्दवल्ली 2/1
4. आत्मा वा अरे दृष्टव्य :– बृहदारण्यक उपनिषद् 2/4/5
5. नास्तिकों वेदनिन्दकः– मनुस्मृति 2/11
6. सर्वदर्शन संग्रह पृष्ठ सं02